17 दिसम्बर 2019, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 JaipurCity / 224 / 2018-20

जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे
जिनवाणी चैनल पर
जिनवाणी JINVANI सुख, शान्ति, समृद्धि
प्रतिदिन
प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 42, अंक : 18
दिसम्बर (द्वितीय), 2019 (वीर नि.संवत्-2546)
संस्थापक सम्पादक : अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंद भारिल्ल
सम्पादक : डॉ. संजीवकुमार गोधा
सह-सम्पादक : पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल
आजीवन शुल्क : 251 रुपये
वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

पूजन-प्रशिक्षण शिविर संपन्न

भिण्ड (म.प्र.) : यहाँ श्री महावीर परमागम मंदिर में श्री दिगम्बर जैन महावीर परमागम मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 21 नवम्बर से 27 नवम्बर तक पूजन विधि-विधान शिक्षण प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में प्रतिष्ठाचार्य पण्डित रमेशचंदजी बांझल इन्दौर द्वारा दोनों समय प्रवचनों व कक्षाओं का लाभ प्राप्त हुआ, जिसके अन्तर्गत षट् आवश्यक, देव-दर्शन, पूजन का प्रयोजन, अष्टकों का प्रयोजन, शुद्ध तेरापंथ आम्नाय का स्वरूप इत्यादि विषयों पर प्रकाश डाला गया। पूजन में द्रव्य पक्ष के साथ-साथ भाव पक्ष की अनिवार्यता को बताते हुए प्रचलित भ्रांतियों का निराकरण भी किया; जिनेन्द्र भगवान की पूजन को कारण परमात्मा से कार्य परमात्मा बनने की आध्यात्मिक प्रक्रिया बताया। रात्रि में शंका-समाधान के माध्यम से शिविरार्थियों की शंकाओं का निराकरण किया गया। शिविर में लगभग 250-300 साधर्मियों ने लाभ लिया। शिविर का संयोजन व संचालन पण्डित विवेकजी शास्त्री भिण्ड द्वारा किया गया।

आध्यात्मिक संगोष्ठी संपन्न

उदयपुर (राज.) : यहाँ नेमिनाथ कॉलोनी स्थित श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 30 नवम्बर को पंचम वार्षिकोत्सव की पूर्व संध्या पर '**अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल का जैन साहित्य को प्रदेय**' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित ऋषभजी शास्त्री, पण्डित खेमचंदजी शास्त्री, डॉ. सुमतजी शास्त्री, डॉ. जिनेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित संदीपजी शास्त्री, डॉ. अंकितजी शास्त्री एवं शाश्वत बालिका भाविका ने अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया। वक्तव्य से प्रभावित होकर अनेक श्रोताओं ने बड़े दादा की कृतियों का स्वाध्याय करने का संकल्प लिया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो. जिनेन्द्रकुमार जैन (विभागाध्यक्ष-जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर) ने की। इस अवसर पर अनेक स्थानीय विद्वान भी उपस्थित थे।

गोष्ठी का संयोजन व संचालन डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री ने किया।

साप्ताहिक गोष्ठियाँ संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 30 नवम्बर को '**ध्यान : स्वरूप व आरूढता की प्रक्रिया**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित अनिलजी शास्त्री खनियांधाना ने की। निर्णायक के रूप में नयनजी बरायठा उपस्थित थे। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से एकाग्र जैन पिड़ावा तथा शास्त्री वर्ग से सुष्मित जैन सेमारी रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण मोहित जैन फुटेरा (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के संयम जैन व साहिल जैन ने किया। आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

दिनांक 1 दिसम्बर को '**जैन विद्या के विविध आयाम**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. सुषमा सिंघवी जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से मानस जैन डडूका तथा शास्त्री वर्ग से पल त्रिवेदी व संयम पुजारी रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण सहज जैन छिन्दवाड़ा (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के वैभव जैन ग्वालियर व सिद्धांत शेट्टी ने किया। आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

विशेष ज्ञान गोष्ठी संपन्न

ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ श्री समयसार विद्यानिकेतन में दिनांक 1 दिसम्बर को '**सामान्य श्रावकाचार**' विषय पर पन्द्रहवीं रविवारीय ज्ञानगोष्ठी का आयोजन किया गया।

गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित धनेन्द्रजी शास्त्री (संयोजक-समयसार विद्यानिकेतन) ने की। मुख्य अतिथि के रूप में पण्डित नेमीचंदजी जैन एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री नगेन्द्रजी जैन ग्वालियर, पण्डित शुद्धात्मजी शास्त्री (निर्देशक-समयसार विद्यानिकेतन), श्रीमती शीलादेवी जैन, श्रीमती अंजलि जैन (प्राचार्या-समयसार विद्यानिकेतन) उपस्थित थे। गोष्ठी का मंगलाचरण कृष्णा जैन ने किया।

गोष्ठी में प्रथम स्थान शाश्वत जैन खनियांधाना, द्वितीय स्थान अभिषेक जैन पोरसा एवं तृतीय स्थान अचल जैन पोरसा ने प्राप्त किया।

सम्पादकीय –

समयसार : संक्षिप्त सार

5

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

जैनपथप्रदर्शक के संस्थापक सम्पादक आदरणीय पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल द्वारा पूर्व में लिखित क्रमशः प्रकाशित यह संक्षिप्त सार पूर्ण होने तक पाठकों के लाभार्थ नियमित प्रकाशित किया जायेगा।

(गतांक से आगे...)

जीव का वास्तविक लक्षण तो चेतनामात्र है। अस्ति से कहें तो वह ज्ञान-दर्शनमय है और नास्ति से कहें तो वह अरस, अरूप, अगंध और अस्पर्शी है। यह जीव पुद्गल के आकार रूप नहीं होता, अतः उसे निराकार व अलिंगग्रहण कहा जाता है।[१]

परन्तु आत्मा के ऐसे स्वभाव को न जानने वाले, पर का संयोग देखकर आत्मा से भिन्न परपदार्थों व परभावों को ही आत्मा मानते हैं। इस कारण कोई राग-द्वेष को, कोई कर्मफल को, कोई शरीर को और कोई अध्यवसानादि भावों को ही जीव मानते हैं। जबकि वस्तुतः ये सब जीव नहीं है, क्योंकि ये सब तो कर्मरूप पुद्गलद्रव्य के निमित्त से होनेवाले या तो संयोगीभाव हैं या संयोग है, अतः अजीव है।[२]

ज्ञानी इन सब आगन्तुक भावों से भेदज्ञान करके ऐसा मानता है कि ''मैं एक हूँ, अरूपी हूँ, ज्ञान-दर्शनमय हूँ, इसके सिवाय अन्य द्रव्य किंचित्मात्र भी मेरे नहीं है।[३]'' इसी दृष्टि से समयसार गाथा-२, ६, ७ भी महत्वपूर्ण हैं, जिनमें क्रमशः स्व-समय-पर-समय एवं प्रमत्त-अप्रमत्त के संदर्भ में पर एवं पर्यायों से भेदज्ञान कराके शुद्धात्मस्वरूप का विशद स्पष्टीकरण किया गया है।

२. कर्त्ताकर्म स्वरूप : अकर्त्तावाद का एक अद्भुत सिद्धांत –

समयसार के कर्त्ता-कर्म अधिकार में वस्तुस्वातन्त्र्य या छहों द्रव्यों के स्वतंत्र परिणमन का निरूपण प्रकारान्तर से परद्रव्य के अकर्तृत्व का ही निरूपण है। यह अकर्तावाद का सिद्धान्त आगमसम्मत युक्तियों द्वारा एवं सिद्धान्तशास्त्रों की पारिभाषिक शब्दावलियों द्वारा तो स्थापित है ही, साथ ही अपने व्यावहारिक लौकिक जीवन को निराकुल सुखमय बताने में भी इसकी उपयोगिता असंदिग्ध है।

आगम के दबाव और युक्तियों की मार से सिद्धान्ततः अकर्तृत्व को स्वीकार कर लेने पर भी अपने दैनिक जीवन की छोटी-मोटी पारिवारिक घटनाओं के सन्दर्भ में उन सिद्धान्तों के प्रयोगों द्वारा आत्मिक शान्ति और निष्कषाय भाव रखने की बात जगत के गले आसानी से नहीं उतरती, उसके अन्तर्मन को सहज स्वीकृत नहीं होती; जबकि हमारे धार्मिक सिद्धान्तों की सच्ची प्रयोगशाला तो हमारे जीवन का कार्यक्षेत्र ही है।

क्या अकर्तावाद जैसे संजीवनी सिद्धान्त केवल शास्त्रों की शोभा बढ़ाने या बौद्धिक व्यायाम करने के लिए ही हैं? अपने व्यवहारिक जीवन में प्रामाणिकता, नैतिकता, निराकुलता एवं पवित्रता प्राप्त करने में इनकी कुछ भी भूमिका-उपयोगिता नहीं है? यह एक अहं प्रश्न है।

जरा सोचो तो, अकर्तृत्व के सिद्धान्त के आधार पर जब हमारी श्रद्धा ऐसी हो जाती है कि **'कोई भी जीव किसी अन्य जीव का भला या बुरा कुछ भी नहीं कर सकता'**, तो फिर हमारे मन में अकारण ही किसी के प्रति राग-द्वेष-मोहभाव क्यों होंगे?

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि अकर्तृत्व की सच्ची श्रद्धा वाले ज्ञानियों के भी क्रोधादि भाव एवं इष्टानिष्ट की भावना प्रत्यक्ष देखी जाती है तथा उनके मन में दूसरों का भला-बुरा या बिगाड़-सुधार करने की भावना भी देखी जाती है - इसका क्या कारण है?

समाधान सरल है, यद्यपि सम्यग्दृष्टि की श्रद्धा सिद्धों जैसी पूर्ण निर्मल होती है, तथापि वह चारित्रमोह कर्मोदय के निमित्त से एवं स्वयं के पुरुषार्थ की कमी के कारण दूसरों पर कषाय करता हुआ भी देखा जा सकता है; पर सम्यग्दृष्टि उसे अपनी कमजोरी मानता है। उस समय भी उसकी श्रद्धा

१. समयसार, गाथा ३६ से ४३ २. समयसार, गाथा ३८
३. समयसार, गाथा ३८

में तो यही भाव है कि पर ने मेरा कुछ भी बिगाड़-सुधार नहीं किया है। अतः उसे उसमें अनन्त राग-द्वेष नहीं होता। उत्पन्न हुई कषाय को यथाशक्ति कृश करने का पुरुषार्थ भी अन्तरात्मा में निरन्तर चालू रहता है। अतः इस अकर्तावाद के सिद्धान्त को धर्म का मूल आधार या धर्म का प्राण भी कहा जाय तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

वस्तुतः पर में अकर्तृत्व की यथार्थ श्रद्धा रखने वाले का तो जीवन ही बदल जाता है। वह अन्दर ही अन्दर कितना सुखी, शान्त, निरभिमानी, निर्लोभी और निराकुल हो जाता है, अज्ञानी तो उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता।

समयसार के अकर्तावाद का तात्पर्य यह है कि जो प्राणी अपने को अनादि से परद्रव्य का कर्त्ता मानकर राग-द्वेष-मोह भाव से कर्मबन्धन में पड़कर संसार में परिभ्रमण कर रहा है, वह अपनी इस मूल भूल को सुधारे और अकर्तृत्व की श्रद्धा के बल से राग-द्वेष का अभाव कर वीतरागता प्रगट करे; क्योंकि वीतराग हुए बिना पूर्णता, पवित्रता व सर्वज्ञता की प्राप्ति संभव नहीं है। एतदर्थ अकर्तावाद को समझना अति आवश्यक है।

वस्तुतः कर्ता-कर्म सम्बन्ध दो द्रव्यों में होता ही नहीं, एक ही द्रव्य में होता है। इस विषय में आचार्य अमृतचन्द्र का निम्नांकित पद्य द्रष्टव्य है -

''यः परिणमति स कर्ता, यः परिणामों भवेतु तत्कर्म।
या परिणमति क्रिया सा, त्रयमपि भिन्नं न वस्तुतया ।।५१ ।।

जो परिणमित होता है, वह कर्ता है, जो परिणाम होता है उसे कर्म कहते हैं और जो परिणति है वह क्रिया कहलाती है, वास्तव में तीनों भिन्न नहीं है।

इस कलश से स्पष्ट है कि जीव और पुद्गल में कर्ता-कर्म सम्बन्ध नहीं है। वस्तुतः कर्तृ-कर्म सम्बन्ध वहीं होता है, जहाँ व्याप्य-व्यापक भाव या उपादान-उपादेय भाव होता है। जो वस्तु कार्यरूप परिणत होती है वह व्यापक है, उपादान है तथा जो कार्य होता है वह व्याप्य है, उपादेय है।

यदि आत्मा परद्रव्यों को करे तो नियम से वह उनके साथ तन्मय हो जाये, पर तन्मय नहीं होता, इसलिए वह उनका कर्ता नहीं है, वीतरागता प्राप्त करने के लिए अकेला अकर्ता होना ही जरूरी नहीं है; बल्कि अपने को पर का अकर्ता जानना, मानना और तद्रूप आचरण करना भी जरूरी है। एक-दूसरे के अकर्ता तो सब हैं ही, पर भूल से अपने को पर का कर्ता मान रखा है, इस कारण अज्ञानी की अनन्त आकुलता और क्रोधादि कषायें कम नहीं होतीं। अन्यथा इस अकर्तृत्व सिद्धान्त की श्रद्धा वाले व्यक्ति के विकल्पों का तो स्वरूप ही कुछ इस प्रकार का होता है कि उसे समय-समय पर प्रतिकूल परिस्थितिजन्य अपनी आकुलता कम करने के लिए वस्तु के स्वतंत्र परिणमन पर एवं उस परिणमन में अपनी अकिंचित्करता के स्वरूप के आधार पर ऐसे विचार आते हैं कि जिनसे उसकी आकुलता सहज ही कम हो जाती है। उदाहरणार्थ, वह सोचता है कि -

(अ) यदि मैं अपने शरीर को अपनी इच्छानुसार परिणमा सकता तो जब भी अपशकुन की प्रतीक मेरी बाईं आँख फड़कती है, उसे तुरन्त बन्द करके शुभ शकुन की प्रतीक दायी आँख क्यों नहीं फड़का लेता?

(ब) यदि मैं अपने प्रयत्नों से शरीर को स्वस्थ रख सकता हूँ तो प्रयत्नों के बावजूद भी यह अस्वस्थ क्यों हो जाता है? जब किसी को केंसर, कोढ़ एवं दमा-श्वांस जैसे प्राणघातक भयंकर दुःखद रोग हो जाते हैं तो वह उन्हें अपने प्रयत्नों से ठीक क्यों नहीं कर लेता?

(स) यदि मैं किसी का भला कर सकता होता तो सबसे पहले अपने कुटुम्ब का भला क्यों न कर लेता? फिर मेरे ही परिजन-पुरजन दुःखी क्यों रहते? मैंने अपनी शक्ति अनुसार उनका भला चाहने एवं भला करने में कसर भी कहाँ छोड़ी, पर मेरी इच्छानुसार मैं किसी का कुछ भी तो नहीं कर सका।

(द) इसीप्रकार, यदि कोई किसी का बुरा या अनिष्ट कर सकता होता तो आज संभवतः यह दुनिया ही इस रूप में न होती, सभी कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो गया होता; क्योंकि दुनिया तो राग-द्वेष का ही दूसरा नाम है, ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जिसका कोई शत्रु न हो; पर आज जगत

यथावत् चल रहा है। इससे स्पष्ट है कि कोई किसी के भले-बुरे, जीवन-मरण व सुख-दुःख का कर्ता-हर्ता नहीं है। जो होना होता है वही होता है, किसी के करने से नहीं होता।

लोक में सभी कार्य स्वतः अपने-अपने षट्कारकों से ही सम्पन्न होते हैं। उनका कर्ता-धर्ता मैं नहीं हूँ। ऐसी श्रद्धा से ज्ञानी पर के कर्तृत्व के भार से निर्भार होकर अपने ज्ञायकस्वभाव का आश्रय लेता है। यही आत्मानुभूति का सहज उपाय है।

प्रत्येक द्रव्य व उनकी विभिन्न पर्यायों के परिणमन में उनके अपने-अपने कर्ता, कर्म, करण आदि स्वतंत्र षट्कारक हैं, जो उनके कार्य के नियामक कारण हैं। ऐसी श्रद्धा का बल बढ़ने से ही ज्ञानी ज्यों-ज्यों इन बहिरंग (पर) षट्कारकों की प्रक्रिया से पार होता है, त्यों-त्यों उसकी आत्मशुद्धि में वृद्धि हो जाती है।[१]

जब कार्य होना होता है, तब कार्य के नियामक अंतरंग षट्कारक, पुरुषार्थ, काललब्धि एवं निमित्तादि पाँचों समवाय स्वतः मिलते ही हैं और नहीं होना होता है तो अनंत प्रयत्नों के बावजूद भी कार्य नहीं होता तथा तदनुरूप कारण भी नहीं मिलते।

मिथ्यात्व एवं अनन्तानुबंधी कषाय के अभाव से अकर्तावाद सिद्धान्त की ऐसी श्रद्धा हो जाती है कि जिससे उसके असीम कष्ट सीमित रह जाते हैं। जो विकार शेष बचता है, उसकी उम्र भी लम्बी नहीं होती।

बस, इसलिए तो आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार में जीवाजीवाधिकार के तुरन्त बाद ही यह कर्ताकर्म अधिकार लिखने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया है। इसमें बताया गया है - जगत का प्रत्येक पदार्थ पूर्णतः स्वतंत्र है, उसमें होनेवाले नित्य नये परिवर्तन या परिणमन का कर्ता वह पदार्थ स्वयं है। कोई भी अन्य पदार्थ या द्रव्य किसी अन्य पदार्थ या द्रव्य का कर्ता-हर्ता नहीं है।

समयसार के कर्ता-कर्म अधिकार का मूल प्रतिपाद्य ही यह है कि परपदार्थ के कर्तृत्व की तो बात ही क्या कहें, अपने क्रोधादि भावों का कर्तृत्व भी ज्ञानियों के नहीं है। जबतक यह जीव ऐसा मानता है कि क्रोधादि का कर्ता व क्रोधादि भाव मेरे कर्म हैं, तब तक वह अज्ञानी है। तथा जब स्व-संवेदन ज्ञान द्वारा क्रोधादि आस्रवों से शुद्धात्म-स्वरूप को भिन्न जान लेता है, तब ज्ञानी होता है।

यद्यपि जीव व अजीव दोनों द्रव्य हैं, तथापि जीव के परिणामों के निमित्त से पुद्गल कर्मवर्गणाएँ स्वतः अपनी तत्समय की योग्यता से रागादि परिणामरूप परिणमित होती है। इस प्रकार जीव के व कर्म के कर्ता-कर्म सम्बन्ध नहीं है; क्योंकि न तो जीव पुद्गलकर्म के किसी गुण का उत्पादक है और न पुद्गल जीव के किसी गुण का उत्पादक है। केवल एक-दूसरे के निमित्त से दोनों का परिणमन अपनी-अपनी योग्यतानुसार होता है। इस कारण जीव सदा अपने भावों का ही कर्ता होता है, अन्य का नहीं।

यद्यपि आत्मा वस्तुतः केवल स्वयं का ही कर्ता-भोक्ता है, द्रव्यकर्मों का नहीं, तथापि द्रव्यकर्मों के उदय के निमित्त से आत्मा को सांसारिक सुख-दुःख का कर्ता-भोक्ता कहा जाता है, परन्तु ऐसा कहने का कारण पर का या द्रव्यकर्म का कर्तृत्व नहीं है, बल्कि आत्मा में जो अपनी अनादिकालीन मिथ्या मान्यता या अज्ञानता से राग-द्वेष-मोह कषायादि भावकर्म हो रहे हैं, उनके कारण यह सांसारिक सुख-दुख का कर्ता-भोक्ता होता है। वस्तुतः आत्मा किसी से उत्पन्न नहीं हुआ, अतः वह किसी का कार्य नहीं है तथा वह किसी को उत्पन्न नहीं करता, इस अपेक्षा वह किसी का कारण भी नहीं है। अतः दो द्रव्यों में मात्र निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, कर्ता-कर्म सम्बन्ध नहीं है।

आत्मा जब तक जीव कर्मप्रकृतियों के निमित्त से होने वाले विभिन्न पर्यायरूप उत्पाद-व्यय का परित्याग नहीं करता, उनके कर्तृत्व-भोक्तृत्व की मान्यता को नहीं छोड़ता, तबतक वह अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि एवं असंयमी रहता है। तथा जब वह अनंत कर्म व कर्मफल के कर्तृत्व-भोक्तृत्व के अहंकारादि एवं असंयमादि दोषों से निवृत्त होकर स्वरूपसन्मुख हो जाता है, तब वह तत्त्व ज्ञानी सम्यक्दृष्टि एवं संयमी होता है। **(क्रमशः)**

१. समयसार, गाथा ७३ की आत्मख्याति टीका

ॐ

सत्पथ फाउंडेशन प्रस्तुत करते हैं

त्रिजन्मशताब्दि महोत्सव

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी

- विश्व स्तर पर स्वाध्याय का वातावरण
- विश्वस्तरीय सत्पथ प्रश्नमंच 1008 पुरस्कार
- पुस्तिका प्रकाशन- 1008 प्रश्न, विद्वानों के आलेख, टोडरमलजी से सम्बन्धित दुर्लभ चित्र सहित
- शहर शहर में कार्यशालाओं का आयोजन (संक्षिप्त शिविर)
- गुरूदेवश्री के उद्गार पण्डित जी साहब के बारे में (पुस्तिका प्रकाशन)
- केलैण्डर (पण्डित जी साहब के सद्वाक्य एवं चित्र सहित)
- सद्वाक्यों का प्रचार (T.V. & OTHER MEDIA)
- और भी बहुत कुछ... वर्षभर

ॐ

सत्पथ

प्रिय साधर्मी,

'सत्पथ' जिनशासन की छत्रछाया में अंकुरित एक प्रयास है, जो स्वपर कल्याणकारी सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुंचाने का सत्प्रयास करता ही रहता है। इसी कड़ी में आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी के त्रिजन्मशताब्दि महोत्सव को पूरे विश्व में धूम-धाम से मनाने का विचार किया है जिसका एकमात्र उद्देश्य पण्डितजी साहब द्वारा उद्घाटित जिनवाणी के रहस्य को जन-जन तक पहुँचाना है।

आशा है आप सत्पथ के इस प्रयास की अनुमोदना अवश्य करेंगे।

त्रिजन्मशताब्दि महोत्सव का भव्य शुभारम्भ मध्य भारत की संतरा नगरी नागपुर की पावन धरा से किया जा रहा है

दिनांक 21 से 23 फरवरी 2020

विधान, प्रवचन, कथा, विमोचन, पाठशाला प्रस्तुति आदि

देखो! आकुलता का घटना-बढ़ना भी बाह्य सामग्री के अनुसार नहीं है; कषाय भावों के घटने-बढ़ने के अनुसार है - मोक्षमार्ग प्रकाशक -पृष्ठ 308

शिरोमणि संरक्षक
- श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
- श्री दिव्यदेशना ट्रस्ट, दिल्ली
- जैन अध्यात्म अकेडमी ऑफ नार्थ, अमेरिका
- श्री मुमुक्षु आश्रम, कोटा

"गलत रास्ते पर कितने ही आगे निकल गये हों; वहाँ से लौट आना चलते रहने से बेहतर है"

सत्पथ - जिस पंथ चले भगवंत वही आचरिए!

7499977257 1008satpath@gmail.com

सत्प्रयास :- डॉ. संजीवकुमार गोधा - 9829064980, पण्डित विपिन जैन शास्त्री - 9860140111

आइये! सत्पथ के इस सत्प्रयास में अपनी सामर्थ्यानुसार सहयोग करके नयी पीढ़ी को जिनशासन की छत्रछाया प्रदान कर पुण्य लाभ अवश्य लें।

आगामी कार्यक्रम...

विधान एवं भवन का लोकार्पण

कोटा (राज.) में सन्मति संस्कार संस्थान के अन्तर्गत एक नवीन भवन का लोकार्पण समारोह पंचपरमेष्ठी विधानपूर्वक दिनांक 31 जनवरी से 1 फरवरी तक होगा। कार्यक्रम में **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** के प्रवचनों का लाभ मिलेगा। सभी साधर्मीजन पधारकर अवश्य लाभ लेवें। **आवास हेतु संपर्क सूत्र –** जयकुमार जैन (7976547853), सचिन शास्त्री (9529154704), अविरल शास्त्री (9660499062)

शोक समाचार

● **बुरहानपुर (म.प्र.)** निवासी श्री अतुल जैन एवं ब्र. वन्दनाबेन देवलाली के पिताजी **श्री बाबूलालजी जैन** का णमोकार मंत्र का जाप करते हुए दिनांक 16 नवम्बर को 87 वर्ष की आयु में शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप अत्यंत स्वाध्यायी थे, अनेक बार देवलाली जाकर तत्त्वज्ञान का लाभ लिया करते थे। आपकी स्मृति में 1100/– रुपये संस्था हेतु प्राप्त हुए।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दुःखों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो – यही मंगल भावना है।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें– वेबसाईट – www.vitragvani.com

संपर्क सूत्र–श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

ये सभी प्रवचन सामग्री अब vitragvani एप पर भी उपलब्ध है।

हार्दिक बधाई !

जयपुर (राज.) निवासी **चि. साकेत शास्त्री** सुपुत्र पण्डित रमेशचंदजी शास्त्री 'दाऊ' का शुभ विवाह सरधना–मेरठ (उ.प्र.) निवासी **सौ. पूजा जैन** सुपुत्री श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन के साथ दिनांक 10 दिसम्बर 2019 को तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुर में सानन्द संपन्न हुआ। इस उपलक्ष्य में सीमंधर जिनमंदिर, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 5100/– रुपये एवं सरधना दिगम्बर जैन मंदिर को 5100/– रुपये दोनों पक्षों द्वारा दिये गये।

टोडरमल महाविद्यालय एवं जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक बधाई!

मुक्त विद्यापीठ के छात्र ध्यान दें

आपका द्वितीय सेमेस्टर दिसम्बर माह में आयोजित होगा जिसके प्रश्न–पत्र दिनांक 20 दिसम्बर तक आपको प्राप्त हो जायेंगे; यदि निश्चित तिथि तक प्रश्न–पत्र प्राप्त न हों तो संपर्क करें – 9785645793

नोट :– प्रश्न–पत्र **Whatsapp** या **E-mail** से भी प्राप्त कर सकते हैं। **– नीशू शास्त्री (प्रबंधक)**

विशेष सूचना

अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल की स्मृति में जैनपथप्रदर्शक का विशेषांक शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है; अतः सभी पाठकों से निवेदन है कि उनसे संबंधित फोटो, लेख, संस्मरण आदि वाट्सएप या ईमेल द्वारा अवश्य भेजें।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए–4, बापूनगर, जयपुर

मोबाइल–9660668506 Email - ptstjaipur@yahoo.com

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ

2

-डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

पहला छन्द

हाँ, तो मैं क्या हूँ? - इसके उत्तर में सबसे पहले कहा गया है कि -

मैं ज्ञानानन्दस्वभावी, आत्मतत्त्व हूँ।

कैसा हूँ? के उत्तर में कहा गया कि -

मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण,
पर की मुझ में कुछ गन्ध नहीं।
मैं अरस, अरूपी, अस्पर्शी,
पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥१॥

मैं तो स्वयं में स्वयं से ही परिपूर्ण तत्त्व हूँ। मुझमें किसी भी प्रकार का अधूरापन है ही नहीं।

स्वयं को संबोधित करते हुये किसी कवि ने लिखा है कि-

रे प्रभु! तू सब बाँते पूरा।
पर की आश करे क्यों मूरख तू काई बाँते अधूरा?
रे प्रभु! तू सब बाँते पूरा।

हे प्रभुता सम्पन्न आत्मन्! तू तो सभी बातों में परिपूर्ण है, पर की आशा क्यों करता है? अरे भाई तू किस बात में अधूरा है?

उक्त पद को **आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी** रस ले-ले कर गाते थे, गाते-गाते भावविभोर हो जाते थे।

यह **ज्ञानानन्दस्वभावी** आत्मगीत भी उन्हें बहुत पसन्द था। अपने प्रवचनों में इस गीत की हमेशा बहुत प्रशंसा किया करते थे।

श्रीमान् सेठ पूरणचन्दजी गोदीका ने तो मेरे पीछे पड़-पड़कर यह गीत लिखाया था। वे मुझसे बार-बार कहते थे कि एक ऐसा गीत बनाओ, जिसमें आत्मा की ही बात हो। जैसे - **मैं हूँ आतमराम।**

जब यह '**मैं ज्ञानानन्दस्वभावी**' गीत बन गया तो वे प्रतिदिन की शास्त्रसभा में इसे भावविभोर होकर गाते थे और दिनभर गुन-गुनाया करते थे।

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन ने तो इस गीत को अपना **राष्ट्रीय गीत** बना लिया है। वे अपने कार्यक्रमों का **आरंभ** इसी गीत से करते हैं और **समापन** भी इसी गीत से करते हैं।

जो कुछ भी हो - **यह एक अत्यन्त लोकप्रिय आत्मगीत है; जो सम्पूर्ण मुमुक्षु समाज में बोला जाता है, गाया जाता है।**

यह है भी अत्यन्त मार्मिक। अध्यात्मप्रेमियों के कण्ठ के हार इस गीत में आत्मा के स्वरूप को भलीभाँति स्पष्ट कर दिया गया है।

मैं अपने में परिपूर्ण तत्त्व हूँ। मुझसे किसी अन्य पदार्थ का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है; पर की मुझमें गंध तक नहीं है। स्पर्श, रस, गंध और रूप (वर्ण) - ये पुद्गल के गुण हैं। ये पुद्गल नामक द्रव्य में ही पाये जाते हैं। मैं पुद्गल द्रव्य से भिन्न पदार्थ हूँ; अतः इनका मुझमें होना संभव नहीं है।

समयसार गाथा ४९ में इस बात को बहुत विस्तार से स्पष्ट किया गया है; जो मूलतः पठनीय है। वहाँ अनेक बोलों से आत्मा अरस, अरूपी, अगंध और अस्पर्शी सिद्ध किया गया है।

१. पुद्गल का स्पर्श गुण आठ प्रकार का है - रूखा, चिकना, ठण्डा, गरम, हल्का, भारी, कोमल और कठोर। ये आठों स्पर्श आत्मा में नहीं हैं; इसलिये **आत्मा अस्पर्शी है।**

२. पुद्गल का रस गुण भी पाँच प्रकार का होता है - खट्टा, मीठा, चरपरा, कड़वा और कषायला। ये पाँचों रस आत्मा में नहीं हैं; इसलिये **आत्मा अरस है।**

३. इसीप्रकार पुद्गल का गंध गुण दो प्रकार का है - सुगंध और दुर्गन्ध। ये दोनों आत्मा में नहीं हैं; इसलिये आत्मा **अगंध स्वभावी है।**

४. पुद्गल का रूप (वर्ण) गुण पाँच प्रकार का होता है - काला, पीला, हरा, लाल और सफेद। ये पाँचों रूप आत्मा में नहीं हैं; अतः **आत्मा अरूपी है।**

किसी भी परपदार्थ से जिसका कोई सम्बन्ध नहीं है; ऐसा मैं अपने आप में परिपूर्ण तत्त्व हूँ। यह अरस, अरूपी और अस्पर्शी तत्त्व पर की गंध से भी रहित है। **पर की गंध से भी रहित होना –** यह फ्रेज एक-दूसरे की अत्यन्त भिन्नता को बताता है।

सभी पौद्गलिक गुण-पर्यायों के अभाव से पुद्गल, जीव से पूर्णतः भिन्न है; इसलिए उसे अजीव कहते हैं।

यह अपना भगवान आत्मा न केवल सभी अजीव (पुद्गल धर्म, अधर्म, आकाश और काल) द्रव्यों से भिन्न है; अपितु अपने से भिन्न अन्य अनन्त जीवों से भी भिन्न है।

अपने से भिन्न परजीव भी अपने लिये अन्य परद्रव्यों के समान परद्रव्य ही हैं, पर ही हैं।

यह भगवान आत्मा पर पदार्थों से एकत्व, ममत्व, कर्तृत्व और भोक्तृत्व - इन चार प्रकार से संबंध स्थापित करता है।

स्त्री-पुत्र, मकान, जायजाद, रुपया पैसा आदि पर पदार्थों को **१. ये मैं** हूँ - ऐसा मानना **एकत्व बुद्धि** है। **२. ये मेरे** हैं - ऐसा मानना **ममत्व बुद्धि** है। **३. इनका मैं कर्त्ता** हूँ - ऐसा मानना-**कर्तृत्व बुद्धि** है और **४. इनका मैं भोक्ता हूँ** - ऐसा मानना **भोक्तृव बुद्धि** है।

एकत्व बुद्धि को अहं बुद्धि और ममत्व बुद्धि को स्वामित्व बुद्धि भी कहते हैं।

इन चारों प्रकार के संबंधों से इन्कार करना ही सम्यग्ज्ञान है। पर से कुछ भी संबंध नहीं का यही आशय है। यद्यपि व्यवहारनय से इन स्त्री-पुत्रादि से संबंध बताये गये हैं; तथापि निश्चयनय उक्त सम्बन्धों से सर्वथा इन्कार करता है।

एक ओर अपना आतमराम और दूसरी ओर पूरा विश्व। **हमें राम और गाँव में से एक को चुनना है।**

यदि हमने आतमराम को चुना तो हमें स्वयं पर्याय में भगवान बनते देर नहीं लगेगी।

यदि आतमराम न चुनकर सारे जगत को चुना तो फिर चार गति और चौरासी लाख योनि में उसीप्रकार भटकना होगा; जिसप्रकार आजतक भटकते रहे हैं।

जब श्रीकृष्ण; कौरव और पाण्डवों को समझाते-समझाते थक गये, पर कोई समझौता नहीं हो सका तो नाराज होकर वे द्वारका चले गये।

वे यह बात अच्छीतरह जानते थे कि युद्ध आरंभ होने के पूर्व युद्ध में सहायता माँगने कौरव और पाण्डव - दोनों उनके पास अवश्य आयेंगे। अतः उन्होंने अपने भाई बलदेव से विचार-विमर्श किया कि उन दोनों को क्या उत्तर देना है, किसका साथ देना है?

बलदेव ने अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा कि हमें लड़ाई में किसी का भी साथ नहीं देना है।

युद्ध से आज तक किसी का भी भला नहीं हुआ। इसलिये युद्ध को रोकने का ही प्रयास किया जाना चाहिये। समझाना चाहिये, युद्ध से होने वाली हानियों से परिचित कराना चाहिये।

श्रीकृष्ण ने कहा - ''समझाया तो बहुत है, पर कोई फल नहीं निकला। अब तो युद्ध होना ही है। ऐसी स्थिति में ऐसा कैसे हो सकता है कि बाल-बच्चे लड़ते रहें और माँ-बाप खड़े-खड़े चुपचाप देखते रहें। किसी न किसी का साथ तो देना ही होगा।''

बलदेव कहने लगे - ''आखिर कौरव और पाण्डव अपने ही तो हैं। वे हमारी बात कैसे नहीं मानेंगे? जरा जोर देकर कहिये। हिंसा की भयानकता को समझाइये।''

उत्तर में श्री कृष्ण बोले - ''भाई, मैंने अपनी शक्ति और बुद्धि से जितना समझा सकता था, समझा लिया।

अब तो यह स्थिति आ गई है कि **किसका साथ देना** - यह निर्णय करना ही होगा।''

बलदेव कहने लगे - ''यह कैसे हो सकता है कि हम युद्ध नहीं करने की बात करते-करते स्वयं युद्ध में शामिल हो जावें, स्वयं भी लड़ने लगें।''

अन्ततः बलदेव उनसे सहमत न हो सके। उन्होंने स्वयं को उक्त युद्ध से अलग कर लिया। यही कारण है कि वे महाभारत में कहीं दिखाई नहीं देते। (क्रमशः)

विशिष्ट गोष्ठी संपन्न

सागर (म.प्र.) : यहाँ मकरोनिया स्थित श्री शांतिनाथ जिनालय में दिनांक 14 से 17 नवम्बर तक विशेष गोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर ब्र. रवीन्द्रजी अमायन द्वारा दोनों समय प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त पण्डित राजेन्द्रजी जबलपुर द्वारा तीनों समय प्रवचन और ब्र. श्रेणिकजी, पण्डित मनोजजी जबलपुर, पण्डित सुरेशजी टीकमगढ, ब्र. नन्हे भैया सागर द्वारा एक-एक प्रवचन हुआ। गोष्ठी में शताधिक साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया।

हार्दिक बधाई !

जयपुर (राज.) जगत्गुरु संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित राज्य स्तरीय बैडमिन्टन प्रतियोगिता में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के विद्यार्थी हितंकर जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष), प्रतीक हरावत (शास्त्री द्वितीय वर्ष), संयम जैन दिल्ली (शास्त्री द्वितीय वर्ष), आप्तअनुशील जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष), जी.जगदीशन (शास्त्री तृतीय वर्ष), आयुष जैन पिपरिया (शास्त्री तृतीय वर्ष) उपविजेता रहे। हितंकर जैन का राष्ट्रीय स्तर पर खेलने हेतु चयन हुआ है।

इस उपलब्धि हेतु महाविद्यालय परिवार एवं जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक बधाई!

ज्ञानगोष्ठी संपन्न

गजपंथा-नासिक (महा.) : यहाँ देशभूषण-कुलभूषण छात्रावास की चौदहवीं ज्ञानगोष्ठी दिनांक 24 नवम्बर को '**पाँच अणुव्रत : एक अनुशीलन**' विषय पर संपन्न हुई। गोष्ठी के अध्यक्ष श्री दीपकजी काले नासिक (अध्यक्ष-सैतवाल समाज, नासिक) एवं मुख्य अतिथि श्री सतीशजी मुद्दलकर व श्री विनोदजी माडीवाले नासिक थे। निर्णायक के रूप में रुक्मणीबेन सोमैया मुम्बई, लक्ष्मीबेन मैंसेरी मुम्बई, श्री कुलभूषणजी जैन, श्रीमती कंचन जैन गजपंथा उपस्थित थे। गोष्ठी में प्रथम स्थान सिद्धेश जैन सावदा ने प्राप्त किया।

गोष्ठी का मंगलाचरण दर्शन जैन नासिक एवं संचालन परिमल जैन व ऋषिकेश जैन ने किया। अभार प्रदर्शन शुभमजी शास्त्री ने किया।

पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक पण्डित सचिन्द्रजी शास्त्री ने '**जैनदर्शन में ज्ञान-ज्ञेय तत्त्व मीमांसा का समीक्षात्मक अध्ययन : प्रवचनसार के विशिष्ट संदर्भ में**' विषय पर सागर विश्वविद्यालय से प्रो. ए. डी. शर्मा के निर्देशन में शोध कार्य पूर्ण किया है।

टोडरमल महाविद्यालय एवं जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक बधाई!

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी की 300वीं जन्म जयंती के उपलक्ष्य में उनकी अद्वितीय कृति मोक्षमार्गप्रकाशक का ऑनलाइन स्वाध्याय करने का अपूर्व अवसर।

यह स्वाध्याय पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के यूट्यूब चैनल पर उपलब्ध है।

संस्थापक सम्पादक :
अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंद भारिल्ल

सम्पादक : **डॉ. संजीवकुमार गोधा**
एम.ए.द्वय, नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.

सह-सम्पादक : **पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल**

प्रकाशक व मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रकाशन तिथि : 13 दिसम्बर 2019

प्रति,